काशकावृत्ति षष्ठाध्याय पदकृत्यों का
विवेचनात्मक अध्ययन

0 0 0 0 0

0 0 0

0

१

:

.

+

उपसंहार

******* उपसंहार *********

कथनीय प्रायः कहा जा चुका है । अब इस उपसंहाराध्याय में समग्र शोधप्रबन्ध का एक प्रकार से विहंगमदृश्य संक्षिप्ततया साररूपेण उपस्थित करना है, जिसके अवलोकनमात्र से इस प्रबन्ध का कुछ आभास मिल सके ।

1- किसी भी भाषा का व्याकरण एक परिमार्जित वह पद्धति है, जो पदों के द्वारा अर्थाभिव्यक्ति को किसी सीमा तक नियन्त्रित व व्यवस्थित करती है । यही कारण है, कि आज हम उन प्राचीन भाषाओं को - जो अपने काल में जनभाषा रही, और आज नहीं है - व्याकरण के आधार पर उसी तरह समझ बोल सकते हैं, जैसे वे अपने काल में समझी बोली जाती थी ।

2- किसी सूत्रविशेष के पदों अथावा पद द्वारा पद अथवा वाक्यनिर्माण में किया जाने वाला कार्य ही पदकृत्य नाम से अभिहित किया जाता है । पदकृत्य की इस विधा के अस्तित्व की पहचान एवं इसे विस्तारित करने का श्रेय सर्वप्रथम महाभाष्यकार को जाता है ।

3- प्रत्युदाहरणों के रूप में पदकृत्य के विषय में काशिकाकार ने पाणिनीय व्याकरण परम्परा को एक विशिष्ट देन दी है । उन्होंने प्राचीन उदाहरणों की रक्षा भी की है तथा समयानुसार नये उदाहरण भी दिये हैं । काशिका के उदाहरणों के द्वारा तात्कालिक समाज, धर्म, राजनीति आदि विषयों पर अच्छा प्रकाश पड़ता है । इनमें से कुछ तथ्य इस प्रकार के भी हैं, जिनके विषय में भाष्य भी मौन है ।

4- पदकृत्यों को न्यास एवं पदमञ्जरी की देन के सम्बन्ध में यह ध्यातव्य है कि न्यासकार एवं पदमञ्जरीकार उदाहरणों के विषय में अत्यन्त जागरूक हैं । काशिका के जो उदाहरण लिपिप्रमाद से छूट गये हैं, उनकी प्रक्रिया भी इन दोनों वृत्तिकारों ने दर्शाकर व्याकरणजगत को उपकृत किया है । इस विषय में एक उदाहरण द्रष्टव्य है -

काशिका के मुद्रित संस्करणों में 'धात्वादेः षः सः' सूत्र पर निम्नस्थ पाठ उपलब्ध होता है -

'धातु ग्रहणं किम् षोडश । षडिकः । षण्डः ।' न्यासकार इसकी व्याख्या करते हुए लिखते हैं -

'षोडश इति । षट् वा दश वास्येति 'संख्ययाव्यय0' इत्यादिना बहुव्रीहिः । 'संख्येये डञ्' इत्यादिना समासान्तो डच् । षोडन्निति । षट् दन्ता अस्येति बहुव्रीहिः । 'वयसि दन्तस्य दतृ' इति दन्त शब्दस्य दत्रादेशः । 'षष उत्त्वं दतृ - दशधासूत्तरपदादेः ष्टुत्वं च' इति षष उत्त्वम्, उतपदादेश्च ष्टुत्वम् - डकारः[2] ।'

बडे आश्चर्य का विषय है कि न्यासकार जिस 'षोडन्' रूप की प्रक्रिया दर्शा रहे हैं, मुद्रित काशिका में उसका नाम तक नहीं है । यही स्थिति पदमञ्जरी की है । पदमञ्जरीकार भी यहां इसी रूप की साधनप्रक्रिया निरूपण करते हुए लिखते हैं -

'षोडन्निति षड्दन्ता यस्येति बहुव्रीहौ 'वयसि दन्तस्य दतृदशधासू' इति षष उत्वम् उत्तरपदादेष्टुत्वं च । 'उगिदचां' इति नुम्, हलड्.यादिसंयोगान्तलोपौ । क्वचितु षोड इति पठ्यते, ततु षोडन्तमाचष्ट इति णिचि कृते टिलोपे पचाद्यचि रूपम् ।

इससे यह सिद्ध होता है कि यहां काशिका में 'षोडन्' उदाहरण भी दिया गया था, जोकि लिपिकरप्रमाद से छूट गया है । प्राच्यसंस्करण के सम्पादकों ने यहां इतना भी ध्यान नहीं दिया कि दोनों टीकाएं (न्यास और पदमञ्जरी) जिस रूप की व्याख्या कर रही हैं, वह मूलरूप में है भी या नहीं । सौभाग्य से यह पाठ उस्मानियासंस्करण में शुद्ध कर दिया गया है ।

5- काशिकावृत्ति के अपपाठित उदाहरणों के विषय में भी न्यास एवं पदमञ्जरी हमारा मार्गदर्शन करती है । 'तुजादीनां दीर्घोऽभ्यासस्य' सूत्र पर मूद्रितकाशिका के सभी संस्करणों में उपान्त्य उदाहरण 'दाधार' दिया गया मिलता है, जो अपपाठ है, क्योंकि इसका उल्लेख तो पूर्वप्रदत्त 'अनड्वान् दाधार' (अथर्व0 4.11.1) उदाहरण में ही हो चुका है । न्यास को देखने से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि यहाँ 'दाधान' यह कानच् प्रत्ययान्त उदाहरण होना चाहिए । किंच उदाहरणों का वर्तमान क्रम भी न्यासानुकूल नहीं । 'दाधान' उदाहरण को कानचप्रत्ययान्तोंके साथ रखने के लिए तीसरे स्थान पर ही पढ़ना चाहिए । 'अनड्वान् दाधार' आदि तीन वाक्य उदघृत किये गये हैं - इनके बीच में 'दाधान' का पाठ युक्त भी नहीं है । हरिक्त ने इन उदाहरणों की पदमञ्जरी में व्याख्या नहीं की है ।

6- इस प्रकार पदकृत्यों के विषय में न्यासकार एवं पदमञ्जरीकार के विचारों कों विशिष्ट पदकृत्यों में प्रदर्शित करने का प्रयत्न किया गया है । न्यासकार पाणिनि के सूत्रार्थ से हटकर कुछ भी मानने को कदापि उद्यत नहीं होते । वे सम्पूर्ण वार्तिकों, उपसंख्यानों, इष्टियों एवं परिभाषा आदियों का मूलस्त्रोत सूत्रपाठ को ही मानते हैं ।

7- पदकृत्यों के विषय में काशिका एवं महाभाष्य का आलोचनात्मक अध्ययन करने के उपरान्त यह भी स्पष्ट होता है कि काशिका एक प्रकार से महाभाष्य का ही संक्षेप है । भाष्य की अनेक पंक्तियों को भी काशिकाकार ने ज्यों का त्यों उद्घृत किया है । भाष्य का उपयोग करते समय काशिकाकार ने कहीं पर पतञ्जलि का पक्ष ग्रहण किया है, और कहीं पर पतञ्जलि की अपेक्षा कात्यायन को अधिक महत्व दिया है तथा कहीं पर इन दोनों की अपेक्षा अन्य आचार्यों का अनुसरण किया है ।

8- पदकृत्यों की समालोचना के सन्दर्भ में यह स्मरणीय है कि न्यासकार एवं पदम ञ्जरीकार ने प्रत्येक पदकृत्य को बार - बार कसौटी पर कसकर देखा है । जहां भी कोई शङ्का हो सकती थी, शङ्का करके उसका समाधान किया है । इस विषय में 'ऊदुपधायाः गोहः ' सूत्र का 'उपधाया इति किम्? पदकृत्य दृष्टव्य है -

प्रकृत सूत्र में 'उपधायाः' पदकृत्य का ग्रहण इस हेतु से किया गया है कि 'अलो न्त्यस्य' परिभाषा की प्रवृत्ति न हो पाये ।

यहाँ न्यासकार एवं पदमञ्जरीकार ने 'उपधायाः' ग्रहण को उत्तरार्थ माना है । इनका कहना है कि 'ओःसुपि' सूत्र से 'ओः' पद की अनुवृति आ रही है, अतः प्रस्तुत सूत्र में यदि 'उपधायाः' पदकृत्य का ग्रहण न किया जाये तो भी कोई दोष आने की सम्भावना नहीं है । यदि 'ओः' पद की अनुवृति नहीं लाते हैं, तो उपधाग्रहण की आवश्यकता होती है । पदमञ्जरीकार हरदत मिश्र का कथन है कि 'गमहनजनखन0' सूत्र से विहित लोप उपधा का ही होवे, इस हेतु से उत्तरार्थ उपधाग्रहण प्रयोजनवान् है ।

9- पदकृत्यों के विषय में हरिदत के विचारों को भी सर्वाधिक आदर प्रदान किया गया है । कहीं - कहीं पर आचार्य हरदतमिश्र एवं आचार्य जिनेन्द्रबुद्धि में पदकृत्यों के विषय में भी मतभेद पाया जाता है । आर्चाय हरदतमिश्र ने स्थान-स्थान पर न्यासकार की आलोचना की है, परन्तु इससे न्यासकार की लोकप्रियता में कोई अन्तर नहीं पड़ा है ।

10- महाभाष्यकार ने पाणिनि व्याकरण के औचित्य को पदकृत्य शैली में महाभाष्यपुस्तकाकार रूप में प्रस्तुत किया है । सूत्रों के पदों के संरक्षण में कात्यायन ने वार्तिकों की संरक्षणा की और इस तरह वार्तिकों की रचना करके पाणिनीय सूत्रों की पूरकता में अगाध विश्वास प्रकट किया । यहां एक सिद्धान्त के विषय में स्पष्ट क़र देना इस सन्दर्भ में पूर्णरूप से न्यायोचित होगा कि भाष्यकार ने अनेक स्थानों पर सूत्रगत पदों को व्यर्थ करके परिभाषा और ज्ञापकों के सिद्धान्त को प्रस्थापित किया है, यह भाष्यकार की एक नयी व आश्चर्यजनक खोज है । मेरा यह अटूट विश्वास

है कि पाणिनीय व्याकरण से, इस पदकृत्य शैली से पूर्णरूप से अन्वित महाभाष्य को निकाल दिया जाये तो निस्सन्देह पाणिनीय व्याकरण सारहीन व तर्कहीन हो जायेगा ।

11- पदकृत्यशैली से अन्वित इस सूत्रसाहित्य की यह विशेषता है कि वह स्वपदाभिधेय अर्थ के बोध के साथ-साथ अनेक अर्थों को भी सूचित करता है । इसलिए अनेक अर्थों के संग्राहक वाक्य को सूत्र कहा गया है - 'सूत्रयति बहूनर्थान् वेष्टयति इति सूत्रम्' इस व्युत्पति के अनुसार सभी शास्त्रों के सूत्रों द्वारा अनेक अर्थों की उपलब्धि आचार्यों द्वारा प्रतिपादित की गई है ।

पाणिनीय सूत्र शब्दों के साधुत्व निरूपण के लिए प्रवृत्त है । संज्ञा, परिभाषा, विधि, नियम, अतिदेश, अधिकार भेद से पाणिनि सूत्र छः भागों में विभक्त हैं । ये सभी प्रकार के सूत्र साक्षात् अथवा परम्परया शब्दों के साधुत्व का निरूपण करते हैं । उनमें विधिसूत्र अर्थविशेष में शब्दविशेष के साधुत्व के निरूपण के लिए नियमों के आधार पर आगम, आदेश प्रत्यय आदि का विधान करता है । शेष पांच भेद विधिशास्त्र की प्रवृति के लिए विशेष नियमों की व्यवस्था करते हैं । इसी तरह पाणिनि के सभी सूत्र अर्थविशेष को लेकर शब्दविशेष के साधुत्व के निरूपण में नियमों का निर्धारण करते हैं । एक उदाहरण देखिए -

'युप्लुवोदीर्घश्छन्दसि' सूत्र में 'छन्दसि' पदकृत्य साधुत्वनियमों के निर्धारण के लिए इस हतु से ग्रहीत किया गया है कि भाषाविषय में यह दीर्घत्व न होने पाये । जैसे - संयुत्य । आप्लुत्य ।

यहां 'संयुत्य और आप्लुत्य' ये दोनों ही उदाहरण वेदविषयक न होकर भाषाविषयक हैं । अतएव यदि प्रस्तुत सूत्र में प्रकृत पदकृत्य का ग्रहण नहीं किया जाता, तो भाषाविषयक उदाहरणों में भी धातु को दीर्घ होता । इस प्रकार 'संयुत्य और आप्लुत्य' आदि भाषावियक उदाहरणों में 'संयूत्य और आप्लूत्य' इस प्रकार का परिवर्तन हो जाता, लेकिन प्रकृत पदकृत्य के ग्रहण से इस प्रकार का भाषाविषयक

परिवर्तन न होकर भाषा का साधुस्वरूप निश्चित हो जाता है ।

निष्कर्षरूप में हम कह सकते हैं कि व्याकरणशास्त्र के विस्तृत ज्ञान के लिए काशिका के पदकृत्यों का सूक्ष्म अध्ययन महाभाष्य, न्यास, पदम ञ्जरी, शब्दकौस्तुभ, सिद्धान्तकौमुदी का अध्ययन किये बिना सम्भव नहीं है ।

---------xxxxxx----------